REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 13 | ISSUE - 11 | AUGUST - 2024

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 356: उपयोग या दुरुपयोग

मनीष कुमार
UGC-JRF, M.A. (रक्षा एवं सामरिक अध्ययन),
शोधार्थी, रक्षा एवं सामरिक अध्ययन, मेरठ कॉलेज, मेरठ (उ. प्र.)

सार

भारत पृथ्वी ग्रह पर सबसे पुरानी मौजूदा सभ्यताओं में से एक हैभारत एक ऐसा देश रहा है जहां बाहरी दुनिया के लोगों और उनके विचारों का निरंतर प्रवाह रहा है, अंततः यह इतनी विविधताओं का घर बन गया है। इसलिए भारत इतने सारे विभिन्न धर्मों, संस्कृतियों, भाषाओं, जातियों और समूहों का मिश्रण है। इस विविधता और एकता की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए भारत के संविधान के निर्माताओं ने इस तरह के संविधान के साथ आने के लिए कड़ी मेहनत की, जो इस तरह की विविध और समग्र संस्कृति को संबोधित कर सके। चूंकि संविधान के निर्माता भारत की विविध पहचानों से अच्छी तरह वाकिफ थे, इसलिए उन्होंने इसे संघ के बजाय "राज्यों का संघकहना पसंद किया। इसके अलावा ", संयुक्त राज्य अमेरिका के विपरीत, भारत अलगअलग राज्यों में शामिल होने के - साथ अस्तित्व में आने वाला देशनहीं था। बल्कि राज्यों के पुनर्गठन से पहले भारत एक देश था।

भूमिका

हालांकि विवाद और संवैधानिक प्रावधानों के दुरुपयोग करने को लेकर कई अलगअलग- मुद्दे रहे हैं लेकिन जो मुद्दा हमेशा से विवादों के बीच रहा है वह है अनुच्छेद पर असहमति 356 व एक राज्य में संवैधानिक तंत्र की विफलता के कारण आपातकाल की घोषणा। कई लोग भारतीय संविधान को राज्य सरकारों के विरुद्ध केंद्र के पक्ष में पक्षपाती मानते हैं फिर भी केंद्र की शक्तियों और राज्यों की स्वायत्तता के बीच संतुलन बनाए रखने की कोशिश की गई है। इस मुद्दे पर रायदेते हुए डॉअम्बेडकर ने कहा .आर.बी ., "हमारे संविधान के तहत राज्य किसी भी तरह से अपने विधायी और कार्यकारी अधिकार के लिए केंद्र पर निर्भर नहीं हैं। केंद्र और राज्य इस मामले में सह-बराबर हैं.... हो सकता है कि संविधान अपने विधायी के संचालन के लिए केंद्र को बहुत बड़ा क्षेत्र प्रदान करता है और किसी भी अन्य संघीय संविधान की तुलना में कार्यकारी अधिकार प्रदान करता है"[1]

अनुच्छेद 356 की प्रकृति व विस्तार

अनुच्छेद 356 उस समय से विवादों के केंद्र में रहा है जब से संविधान लागू हुआ है और इसे पहली बार लागू किया गया था। यह भारत के संविधान का प्रावधान रहा है, जिसने भारत के एकात्मक या संघीय राज्य होने की बहस को हमेशा जीवित रखा है। निस्संदेह लोगों के जीवन और संपत्ति की सुरक्षा सबसे प्रमुख मुद्दा है जिसके लिए राज्य अस्तित्व में आया माना जाता है और बाहर औरभीतर दोनों संकटों के समय में देश की सुरक्षा करना राज्य का प्रमुख कर्तव्यहै। भारत सरकार अधिनियम, 1935 के लागू होने के बाद से इस प्रकार की आपातकालीन स्थितियों से निपटने के लिए आपातकालीन शक्ति के प्रावधान भारत के संविधान में निहित हैं[2] हालाँकि, जब भारत स्वतंत्र हुआ और उन्हीं शक्तियों को जारी रखने पर विचार किया जा रहा था, स्वतंत्र भारत के राष्ट्रपति को दिया गया यह बहस और चर्चा का विषय बन गया क्योंकि संविधान सभा में इसका बहुत विरोध हुआ।[3] जबकि संविधान की मसौदा समिति के अध्यक्ष डॉ .आर.बी .

अम्बेडकर का माननाथा कि इसे दुर्लभ से दुर्लभतम मामलों में लागू किया जाएगा, जिसका पहले से ही सौ से अधिक बार उपयोग और दुरुपयोग किया जा चुका है। केंद्र सरकार ने सत्ता की बागडोर संभालने के लिए आए विभिन्न राजनीतिक दलों के द्वारा इस प्रावधान का उपयोग किया गया है। ब्रिटिश काल के दौरान इसके अभ्यास की तुलना वर्तमान समय से बिल्कुलभी नहीं की जा सकती क्योंकि 1935 में जब यह अस्तित्व में आया, तब भारत ब्रिटिश साम्राज्य का उपनिवेश था जबकि आज यह एक स्वतंत्र देश और दुनिया का सबसेबड़ा लोकतंत्र है जहां संघ और राज्यों दोनों में अपनी प्रतिनिधि सरकारोंका चुनाव करते समय एक अरब से अधिक लोग अपनी राय व्यक्त करते हैं। एस.आर. बोम्मई के विरुद्ध भारतीय संघ राज्य की स्वायत्तता की प्रकृति भी देखी गई थी। जहां सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि भारत के संविधान ने केंद्र के पक्ष में पूर्वाग्रह के साथएक संघ बनाया है लेकिन राज्यों को आवंटित क्षेत्र के भीतर, वे सर्वोच्च हैं।[4]

भारतीय संविधान अनिवार्य रूप से एक कानूनी और राजनीतिक दस्तावेज है, अनुच्छेद 356 जैसे प्रावधानों में संपूर्ण संवैधानिक योजना को अस्थिर करने और कमजोर करने की क्षमता है। ऐसे प्रावधानों के तहत निहित शक्तियों का उपयोग संवैधानिक संतुलन बनाए रखने के लिए होना चाहिए। इसके अलावा, लोकतंत्र और संघवाद इसकी मूल संरचना के हिस्से के रूप में हमारेसंविधान की आवश्यक विशेषताएं हैं। इसलिए, अनुच्छेद 356 पर रखी गई किसी भी व्याख्या को उनके तानेबाने को बनाए रखने में मदद करनी चाहिए न कि - उन्हें तोड़ना चाहिए।

वर्तमान में भारत के संविधान का अनुच्छेद 356 दर्शाता है:

"राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता के मामले में प्रावधान

(1) यदि राष्ट्रपति, किसी राज्य के राज्यपाल से रिपोर्ट प्राप्त होने पर या संतुष्ट हैं कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें राज्यकी सरकार इस संविधान के प्रावधानों के अनुसार नहीं चल रही है तो राष्ट्रपति उद्घोषणा कर सकता है कि-

(क राज्य की सरकार के सभी (एवम् किसी भी कार्य को और राज्य के विधानमंडलके अलावा राज्य में राज्यपाल अथवा किसी अन्य प्राधिकरण द्वारा निहित व प्रयोग करने योग्य किसी भी शक्ति को ग्रहण करता है;

(खराज्य के विधानमंडल की शक्तियां संसद के प्राधिकार द्वारा(या उसके अधीन प्रयोग करने योग्य होंगी;

(गइस तरह के प्रासंगिक और परिणामी प्रावधानों को राष्ट्रपति (के उद्देश्यों को प्रभावी करने के लिए आवश्यक या वांछनीय प्रतीत होता है उद्घोषणा, जिसमें राज्य में किसी व्यक्ति या प्राधिकरण से संबंधित इस संविधान केकिसी भी प्रावधान के संचालन को पूरी तरह से या किसी भी भाग में निलंबित करने के प्रावधानशामिल हैं;

"बशर्ते कि इस खंड में कुछ भी राष्ट्रपति को किसी उच्च न्यायालय में निहित या प्रयोगकरने योग्य शक्तियों में से किसी भी शक्ति को ग्रहण करने या उच्च न्यायालयों से संबंधितइस संविधान के किसी भी प्रावधान के संचालन को पूरी तरह से या आंशिक रूप से निलंबित करने के लिए अधिकृत नहीं करेगा।"

2. "इस तरह की किसी भी उद्घोषणा को बाद में निरस्त या परिवर्तित किया जा सकता है|

3. इस अनुच्छेद के तहत प्रत्येक उद्घोषणा संसद के प्रत्येक सदन केसमक्ष रखी जाएगी और, सिवाय इसके कि जहां यह पिछली उद्घोषणा को रद्द करने वाली उद्घोषणा है, तो दो महीने की समाप्ति पर समाप्त हो जाएगी, जब तक कि उस अवधि की समाप्ति से पहले इसे संसद के दोनों सदनों में अनुमोदित नहीं किया जाता है।"

"बशर्ते कि यदि ऐसी कोई उद्घोषणा पिछली)उद्घोषणा को रद्द करने वाली उद्घोषणा नहीं हैउस समय जारी की जाती है जब लोक (सभा भंग हो जाती है या लोक सभा का विघटन दो महीने की अवधि के दौरान होता है| ऐसी उद्घोषणा के संबंध में एक संकल्पउस अवधि की समाप्ति से पहले लोगों की सभा द्वारा पारित किया गया है, तो उद्घोषणा लोक सभा की तारीख से तीस दिन की समाप्ति पर समाप्त हो जाएगी| जब तक कि तीस दिनों की उक्त अवधि की समाप्ति से पहले लोक सभा द्वारा उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प भी पारित नहीं किया जाता है।"

4. "अनुमोदित एक उद्घोषणा, जब तक निरस्त नहीं हो जाती, उद्घोषणा जारी होने की तारीख से छह महीने की अवधि की समाप्ति पर काम करना बंद कर देगी:

बशर्ते कि संसद के दोनों सदनों द्वारा ऐसी उद्घोषणा को जारी रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प पारित किया जाता है, तो उद्घोषणा, जब तक कि निरस्त नहीं हो जाती, उस तारीख से छह महीने की आगे की अवधि के लिए लागू रहेगी, लेकिन ऐसी कोई उद्घोषणा किसी भी स्थिति में तीन साल से अधिक समय तक लागू नहीं रहेगी|

परन्तु लोक सभा द्वारा ऐसी उद्घोषणा पारित की गई है कि यदि लोक सभा का विघटन छह माह की किसी अवधि के दौरान होता है और प्रवृत्त बने रहने के संबंध में प्रवृत्त बनेरहने का अनुमोदन करने वाला संकल्प उक्त अवधि के दौरान पारित होता है। उद्घोषणा उस तारीख से तीस दिनों की समाप्ति पर समाप्त हो जाएगी, जिस दिन लोक सभा अपने पुनर्गठन के बाद पहली बार बैठती है| जब तक कि तीस दिनों की उक्त अवधि की समाप्ति से पहले उद्घोषणा के बल को जारी रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प लोक सभा द्वारा भी पारित किया गया है|"

"पंजाब राज्य के संबंध में यह भी देखा गया है कि मई1987 के 11 वें दिन खंड)I) के तहत जारी की गई उद्घोषणा के मामले में इस खंड के पहले प्रावधान में के "तीन साल"संदर्भ को एक संदर्भ के रूप में पांच सालतक माना जाएगा।"

5. "खंड)4) में निहित किसी भी बात के बावजूद, खंड)3) के तहत अनुमोदित उद्घोषणा के जारी रहने के संबंध में एक संकल्प, ऐसी उद्घोषणा की तारीख या जारी होने से एक वर्ष की समाप्ति से परे किसी भी अवधि के लिए पारित नहीं होगा जब तक –

(क इस तरह के संकल्प के पारित होने के (उपरांत, पूरे भारत में या राज्य में या फिर राज्य के किसी भी हिस्से में आपातकाल की घोषणा लागू हो सकती है, और

(खत करता है कि संबंधित राज्य कीचुनाव आयोग प्रमाणि (विधान सभा के आम चुनाव कराने में कठिनाइयों के कारण इस तरह के संकल्प में निहित अवधि के दौरान खंड)3) के तहत अनुमोदित उद्घोषणा की निरंतरता आवश्यक है":

भारत के संविधान के गहन विश्लेषण से पता चलता है कि यद्यपि अनुच्छेद 356 को लागू करने की शक्ति भारत के राष्ट्रपति में निहित है लेकिन सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए इन सभी शक्तियों का उपयोग प्रधान मंत्री और मंत्रिपरिषदके इशारे पर किया जाता है।[5] 1935 के अधिनियम के तहत, एक प्रांत के राज्यपाल को गवर्नर जनरल की सहमति से उद्घोषणा-पारित करने का अधिकार था, दूसरी ओर, अनुच्छेद 356 के तहत, एक राज्य का राज्यपाल केवल राष्ट्रपति को ही रिपोर्ट पेश करेगा। 1935 के अधिनियम के तहत, राज्यपाल को अपने विवेक से कार्य करने का अधिकार दिया गया था। लेकिन अनुच्छेद 356 के तहत अपने विवेक से काम करने का अधिकार नहीं है।

पुन :1935 के अधिनियम की धारा 93 के तहत उद्घोषणा संसद की स्वीकृति के बिना 6 महीने की अवधि तक जारी रह सकती है, जबकि अनुच्छेद 356 के तहत यह 2 महीने की अवधि के लिए लागू रह सकती है। 1935 के अधिनियम के तहत, राज्यपाल को उच्च न्यायालय की शक्तियों को छोड़कर किसी भी प्राधिकरण में निहित या प्रयोग करने योग्य सभी या किसी भी शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार था। वहीं, अनुच्छेद 356 के तहत, केवल राष्ट्रपति विधानमंडल और उच्च न्यायालय के अलावा राज्य में राज्यपाल या किसी अन्य प्राधिकरण द्वारा निहित या प्रयोग करने योग्य सभी या किसी भी शक्ति का प्रयोग कर सकता है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि निर्माताओं ने आपातकाल लागू करते समयभारत सरकार अधिनियम, 1935, के तहत कुछ परिवर्तनों के साथ भारतीय संविधान ने धारा 93 को शामिल किया।

अनुच्छेद 356: उपयोग व दुरुपयोग

अनुच्छेद 356 के तहत शक्ति का उपयोग एक असाधारण है और संयम सेप्रयोग करने की आवश्यकता है। इसका उपयोग तब किया जा सकता है जब सरकार के लोकतांत्रिक स्वरूप को बनाए रखने के लिए अनुच्छेद 356 वारंट द्वारा विचार की गई स्थिति और राजनीतिक प्रक्रिया को पक्षाघात से बचाने के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। अनुच्छेद 356 राष्ट्रपति की शक्तियों की असाधारण प्रकृति को दर्शाता है, जिसका प्रयोग उन्हें दुर्लभ से दुर्लभतम स्थिति में औरबहुत परिश्रम के साथ करना चाहिए।[6] केंद्र और संघीय इकाइयों के बीच संवैधानिक संतुलन और सामंजस्य इसके अलावा, यदि उद्घोषणा स्वतंत्र रूप से की जाती है, तो उस स्थिति में, राज्य सरकारों के मुख्यमंत्री हमेशा एक असुरक्षित स्थिति में रहेंगे और किसी भी स्थिति में अपनीसीट खोने का खतरा भी रहेगा। इसलिए उनके लिए राज्य के हित और कल्याण में महत्वपूर्ण निर्णय लेना बहुत मुश्किल हो जाताहै।

भारतीय संविधान के लागू होने के बाद सेही अनुच्छेद 356 का गंभीर दुरुपयोग किए जाने के कई उदाहरण हैं। अधिक से अधिक बार, इसका उपयोग केंद्र में सत्ताधारी पार्टी द्वारा राजनीतिक प्रबंधन के एक उपकरण के रूप में विनियमितकरने के लिए किया गया है| राजनीतिक प्रक्रिया को अपने पक्ष में समायोजित, बढ़ावा देना तथा स्थिर करना और विपक्षी दलों पर घोर अन्याय करना। राज्य सरकारों की ओर से जरा सा भी आकस्मिक व्यवहार या फैसलों में देरी को संवैधानिक मशीनरी और उन राज्यों में थोपे गए प्रावधान की नाकामी

माना गया हैपतिकई बार राष्ट्र . शासन भी मुख्य रूप से सत्तारूढ़ पार्टी को आंतरिक असंतोष के संकट को दूर करनेमें सक्षम बनाने के लिए लगाया गया है, जो कि पार्टी हाईकमान द्वारा सत्तारूढ़ मुख्यमंत्री के प्रति घृणा का रूप भी ले सकता है।

अनुच्छेद 356 को लागू करना मूल रूप से कोई नई बात नहीं है। इसकी शुरुआत 1951 में पंजाब में सत्ताधारी दल के आंतरिक संकट को दूर करने के लिए हुईथी। 1950 में संविधान की शुरुआत के बाद से54 वर्षों के दौरान, अनुच्छेद को विभिन्न कारणों से लगभग सौ बार लागू किया गया था। जिन राज्यों में सबसे ज्यादा बार राष्ट्रपति शासन लागू किया गया है वे केरल, पंजाब और उत्तर प्रदेश रहे हैं। यह डॉ .अम्बेडकर के आश्वासनों और अपेक्षाओं के बिल्कुल विपरीत था किऐसे अनुच्छेदों को कभी भी लागू नहीं किया जाएगा और वे इच्छाओं के मृत पत्रबने रहेंगे।[7]

इसका एक उदाहरण यह हैं कि एक बार मीडिया में यह खबर आई कि राष्ट्रपति डॉ शंकर दयाल शर्मा 1992 में उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश और राजस्थान राज्यों के संबंध में अनुच्छेद 356 के तहत उद्घोषणा पर हस्ताक्षर करने के इच्छुक नहीं थे। लेकिन, ऐसा लगता है कि वह अंत में हस्ताक्षर करने के लिए सहमत हुएक्योंकि संविधान के तहत उनके पास कोई अन्य विकल्प नहीं था। इस संबंध में, यह निवेदन किया जाता है कि डॉ शंकर दयाल शर्मा को प्रधान मंत्री नरसिन्हा राव का ध्यान आकर्षित करके स्वयं की पुष्टि करनी चाहिए थी।

हालांकि प्रारंभिक वर्षों में, संविधान की घोषणा के बाद से, इसके उपयोग के उदाहरण बहुत अधिक नहीं थे, लेकिन समय बीतने के साथ ही अनुच्छेद को बढ़ती आवृत्ति के साथ लागू किया गया है। भारत में अलग अलग-अलग समय पर अलग-कारणों से राष्ट्रपति शासन लगाया जाता रहा है। 1977 में जनता सरकार द्वारा हरियाणा, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु और राजस्थान के नौ राज्यों में राष्ट्रपति शासन मुख्य रूप से संबंधित राज्यों में सत्तारूढ़पार्टी की हार के लिए लगाया गया था। जबकि नरसिम्हा राव सरकार द्वारा लगाया गया राष्ट्रपति शासन राष्ट्रपति की इस संतुष्टि पर आधारित था कि राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, विश्व हिन्दू परिषद व बजरंग दल जैसे सांप्रदायिक संगठनों पर प्रतिबंध लगाने वाले केंद्रीयअध्यादेशों को संबंधित बीजेपी सरकार द्वारा मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश और राजस्थान राज्यों में लागू किया गया था। इसके अलावा, कई बार कुप्रशासन भी केंद्र द्वारा राज्य सरकारों को हटाने के लिए पर्याप्त कारण बन गया है। भ्रष्टाचार ने इसे और बढ़ा दिया है।[8] 1979 में तमिलनाडु सरकार का नेतृत्व एम्करुणानिधि . कर रहे थे और राज्यपाल द्वारा रिपोर्ट के आधार पर बर्खास्त कर दिया गया था क्योंकि सरकार कुप्रशासन, भ्रष्टाचार एवं सत्ता के दुरुपयोग के गंभीर कृत्यों में लिप्त पाई गई थी और यह सभी मानदंडोंन्याय और समानता के सभी सिद्धांतों को ध्यान में रखकर किया गया था।[9]

1979 में मणिपुर में योंगारनाशा शाइजा मंत्रालय की बर्खास्तगी भी (जनता) राज्यपाल की रिपोर्ट पर आधारित थी, जिसे ऐसा" भ्रष्ट मंत्रालयघोषित किया " गया था। इसी तरह भ्रष्टाचार के आरोप में एस प्रताप सिंह की सरकार को बर्खास्त करने को आधार के रूप में बनाए गए पंजाब में कैरों, 1963 में कर्नाटक में देवराज उर्स (1977), हरियाणा में चौ बंसीलाल (1972) और महाराष्ट्र में एआर अंतुले (1983) की विधानसभाओं को भंग कर दिया गया था।

त्रिशंकु विधानसभाओं का लाभ उठाते हुए राष्ट्रपति शासन भी लगाया गयाथा क्योंकि राज्य विधानसभाओं के चुनावपरिणाम निर्णायक नहीं थे, अर्थात कोई भी पार्टी या पार्टियों का पहले से मौजूद गठबंधन विधानसभा में बहुमत नहीं प्राप्त कर पाया था।उदाहरण के लिए, 1965 में केरल में यह देखा गया कि नव निर्वाचित विधानसभा सीपीआई (एमको भंग कर दिया गया (, यह विधानसभा में सबसे बड़ी पार्टी बनकर उभरी। इसी तरह की स्थिति 1996 में उत्तर प्रदेश में थोड़े अंतर के साथ हुई थी एवम् विधानसभा को भंग नहींकिया गया था, लेकिन निलंबित स्थिति में रखा गया था क्योंकि बीजेपी ने सरकार बनानेका दावा किया था।[10] जैसा कि हाल ही में बिहार और गोवा में 2005 में राष्ट्रपति शासन लागू किया गया था।

अनुच्छेद 356 का कई बार कानूनव्यवस्था भंग होने और राज्य- सरकार के असमर्थ होने पर इस्तेमाल किया गया है| केरल सरकार को निष्कासित करना इसी प्रकार का उदाहरण था। 1950 में कम्युनिस्ट सरकार ने राज्य की सामाजिक आर्थिक व्यवस्था में-कट्टरपंथी/संरचनात्मक नवाचारों की शुरुआत की, जिसने प्रमुख आर्थिक, जाति और धार्मिक समूहों के निहित स्वार्थों को परेशान किया। परिणामस्वरूप प्रभावित समूहों ने 'मुक्ति संघर्ष शुरू किया। राज्यों और केंद्र की कांग्रेस पार्टी ने भी अपने स्वयं के राजनीतिक उद्देश्यों के लिए मुक्ति संग्राम का समर्थन किया। टीके टोपे के अनुसार"1959 में केरल में अनुच्छेद 356 का आह्वान भारत सरकार पर अनुच्छेद के द्वारा प्रदान कि गई शक्ति के दुरुपयोग का एक उदाहरण था।[11]

एम करुणानिधि के खिलाफ .1991 में तमिलनाडु में अनुच्छेद 356 के आवेदन से पता चलता है कि इस आपातकालीन प्रावधान का इस्तेमाल चंद्रशेखर के मंत्रालय औरAIADMK जैसी अन्य पार्टियों के समर्थन हासिल करने के लिए एक उपकरण के रूप में किया गया था;[12] असम में मोहंता सरकार ने 1990 में राज्य में बिगड़ती कानून व्यवस्था की स्थिति से निपटने में राज्य सरकार की निरंकुशता के आधार पर यह आरोप लगाया गया था कि यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ असम)ULFA) आपराधिक और अलगाववादी गतिविधियों में लिप्त था। हालाँकि, तथ्यों का बारीकी से अवलोकन करने के बाद यह माना गया कि यह कानून और व्यवस्था की समस्या नहीं थी, बल्कि वीपी सिंह के साथ सीएम की घनिष्ठ निष्ठा थी, जिसने चंद्रशेखर की सरकार को खतरे में डाल दिया था। कानून व्यवस्था की विफलता के आधार पर अनुच्छेद 356 के तहत राबड़ी देवी के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय जनता दल सरकार की बर्खास्तगी ने एक स्पष्ट तस्वीर दी थी कि कैसे सरकार ने राज्यपाल के पद की संवैधानिक स्थिति का उपयोग राज्यपाल के लिए किया था, न कि राज्यपाल की राजनीतिक सुविधा के लिए किया था।

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा समझाया गया है किहिंसा के अचानक प्रकोप के कारण" : किसी राज्य में कानून और व्यवस्था की स्थिति बिगड़ने से राष्ट्रपति शासन लगाने का कदम सही नहीं होता है जब तक कि राष्ट्रपति इस बात पर सहमति प्रकट न करे कि राज्य में अचानक हुई गड़बड़ी के कारण कानून और व्यवस्था की स्थिति ने राज्य में राज्य सरकार के कामकाज को असंभव बना दिया है या ऐसा करने की संभावना है।"[13]

न्यायिक पक्ष

निस्संदेह, अनुच्छेद 356 संविधान की घोषणा से ही भारत में केंद्र और राज्यों के बीच कलह का एक सेब रहा है। हालांकि, "सहकारी संघवाद" की भावना संघ और राज्यों के बीच संतुलन बनाए रख सकती है और लोगों की भलाईको बढ़ावा दे सकती है, न कि वर्चस्व या श्रेष्ठता का रवैया। हमारी संवैधानिक व्यवस्था के तहत, कोई भी इकाई श्रेष्ठता का दावा नहीं कर सकती है। संप्रभुता किसी एक संस्थान या सरकार के किसी एक विंग में नहीं होती है।यह मानते हुए कि राज्यों पर केंद्र को कुछ प्रभुत्व दिया गया है, वह प्रभुत्व निश्चित रूप से सही उद्देश्य के लिए होना चाहिए, न कि छिपे हुए बुरे उद्देश्यों के लिए। अनुच्छेद356 को किसी राजनीतिक दल की संभावनाओं को आगे बढ़ाने या विधिवत निर्वाचित सरकार और विधिवत गठित विधानसभा को अस्थिर करने के लिए नियोजित नहीं किया जा सकता है। तो जहाँ तक राष्ट्रपति की न्यायिक संतुष्टि का प्रश्न है, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच इसकी समीक्षात्मकता के मुद्दे पर हमेशा एक झगड़ा होता रहा है और अदालत को जनादेश के आधार पर इसकी जांच करने से रोक दियागया। अनुच्छेद 74 का खंड 2, जो इस प्रकार हैयह प्रश्न कि क्या कोई है" :, और यदि हां, तो मंत्रियों द्वारा राष्ट्रपति को क्या सलाह दी गई, इसकी जांच किसी भी अदालत में नहीं की जाएगी। न्यायिक समीक्षा के दायरे से राष्ट्रपति की संतुष्टि को" बाहर करने के लिए, खंड 5 को संविधान)38वां संशोधनअधिनियम (, 1975 द्वारा अनुच्छेद 356 में जोड़ा गया था जो इस प्रकार थाइस संविधान में कुछ भी होने" : के बावजूद, खंड)1) में उल्लेखित राष्ट्रपति का निर्णय अंतिम और निर्णायक होगा और इस पर कोई भी प्रश्न चिह्न किसी भी अदालत के द्वारा नहीं लगाया जा सकता है।"

राजस्थान राज्य बनाम भारत संघ में इस प्रश्न पर प्रकाश डाला गया था, राष्ट्रपति की संतुष्टि की न्यायिक समीक्षा की गुंजाइश इस आधार पर विकसित की गई थी :

(i) जहां आदेश दुर्भावनापूर्णथा

(ii) जहां आदेश बाहरी या अप्रासंगिक विचार को ध्यान में रखते हुए पारित करने वाले प्राधिकरण ने लिया था

(iii) जहां आदेश पारित करने वाले प्राधिकारी प्रासंगिक विचारों को ध्यान में रखने में विफल रहे।

राजस्थान मामले में निर्णय अनुच्छेद 356 के इतिहास में एक मील का पत्थर है क्योंकि इसने ऐसे मामलों में राष्ट्रपति के आदेश की न्यायिक समीक्षा के लिए स्थान प्रदान किया। दुर्भाग्य से, ऐसा हुआ कि वर्षों से, केंद्र ने हमेशा सहकारी संघवाद की अवधारणा या भावना और उद्देश्य को ध्यान में नहीं रखा है जिसके लिए अनुच्छेद राज्यों के साथ व्यवहार करते हुए अधिनियमित किया गया था और निश्चित रूप से कई बार अनुच्छेद 356 के तहत शक्ति का घोर दुरुपयोग किया है।[14]

ऐसा नहीं है कि केवल कांग्रेस सरकारें ही अपने फायदे के लिए इस अनुच्छेद का दुरूपयोग करती रही हैं। यह इस तथ्य से पता चलता है कि जहां कांग्रेस सरकारों को74 उद्घोषणाओं में से26 न्यायोचित उदाहरणों का श्रेय दिया गया था, वहीं गैरकांग्रेसी शासन को - कुल 18 उद्घोषणाओं में से केवल 4 ऐसे उदाहरणों का श्रेय दिया जा सकता है। कांग्रेस समर्थित गैरकांग्रेसी अल्पसंख्यक- शासनों का

रिकॉर्ड, की गई कुल आठ घोषणाओं में से चार न्यायोचित उदाहरण दिखाता है। केंद्र में सत्ता में आनेवाली सभी पार्टियों द्वारा इस प्रावधान का दुरुपयोग किया गया है, चाहे वह छोटी अवधि के लिए हो या अधिक समय के लिए।

रिपोर्ट भेजते समय राज्यपाल के दायित्व के बारे में, बोम्मई मामले में यह देखा गया किराज्यपाल एक बहुत ही उच्च " : संवैधानिक पदाधिकारी हैं। उन्हें अपनी शपथ के अनुरूप निष्पक्ष और ईमानदारी से कार्य करना चाहिए।" राजनीतिक संकट की स्थिति में राष्ट्रपति शासन की सिफारिश करने से पहले राज्यपाल को बहुमत के समर्थन वाली सरकार होने की सभी संभावनाओं का पता लगाना चाहिए; इस प्रकार की स्थिति तब उत्पन्न हो सकती है जब –

(क) आम चुनाव के बाद, कोई भी दल या पार्टियों का गठबंधन पूर्ण बहुमत हासिल करने में सक्षम न हुआ हो

(ख) एक मंत्रालय में बहुमत न आने के कारण उसको खारिज कर दिया जाता है

(ग) विधानसभा में बहुमत प्राप्त करने वाली पार्टी ने मंत्रालय के कार्य के निर्वाहन से मना कर दिया हो|

निष्कर्ष

इसलिए, अनुच्छेद 356 को लागू करने का यही मुख्य कारण होना चाहिए जब राष्ट्रपति वास्तव में संतुष्ट हों कि संवैधानिक तंत्र विफल हो गया है। इसके अलावा, इसे कभी भी राजनीतिक प्रतिशोध या केंद्र में सत्ता में पार्टी के लाभ के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए। यह भी स्पष्ट किया जाता है कि देश का संघीय चरित्र इस विश्वास को प्रेरित करता है कि लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित बहुमत या यहां तक कि गठबंधन सरकार अपना कार्यकाल पूरा करेगी। कोई भी सच्चा लोकतंत्र निर्वाचित प्रांतीय सरकारोंका पेट नहीं भरेगा जब तक कि स्थिति अन्यथा अपरिहार्य न हो। बारबार होने वाले- मध्य अवधि चुनाव सरकार के लोकतांत्रिक रूप में लोगों के विश्वास कोहिला देते हैं। ये चुनाव राज्य और उम्मीदवार को चुनावी अनुभव के अलावा, लोकतांत्रिक प्रक्रिया की प्रभावकारिता में भी संदेह की भावना उत्पन्न करते है, जो स्वयं संसदीय प्रणाली के लिए अत्यधिक खतरनाक है। इसलिए, यह अत्यधिक वांछनीय है कि अनुच्छेद 356 को लागू करने की शक्ति का उपयोग उचित देखभाल और गैरपक्षपातपूर्ण तरीके से किया जाना- चाहिए। इसलिए यह अनुशंसा की जाती है कि ऐसी स्थिति में, यदि सरकार की स्थापना संभव नहीं है और बिना किसी विलंब के नए चुनाव हो सकते हैं, तो राज्यपाल को निवर्तमान मंत्रालय को कार्यवाहक के रूप में जारी रखने के लिए कहना चाहिए। बशर्ते कि सरकार का मंत्रालय कुप्रशासन या भ्रष्टाचार के किसीभी आरोप से असंबद्ध एक प्रमुख नीतिगत मुद्दे पर पूरी तरह से हार गया हो और जारी रखने के लिए सहमत हो। राज्यपाल को तब विधानसभा को भंग कर देना चाहिए और संवैधानिक संकट के समाधान को मतदाताओं पर छोड़ देना चाहिए। यदि ऊपर वर्णित सामग्री अनुपस्थित हैं, तो राज्यपाल को विधानसभा को भंग किए बिना राष्ट्रपति शासन की सिफारिश करनी चाहिए। राज्यपाल की रिपोर्ट एक मौखिक दस्तावेज होना चाहिए जिसमें सभी भौतिक तथ्यों और आधारों का एक सटीक और स्पष्ट विवरण होना चाहिए, जिसके आधार पर राष्ट्रपति अनुच्छेद 356 में अपेक्षित स्थिति के अस्तित्व का सही पता लगा सके और खुद को संतुष्ट कर सके। इन सावधानियों की भी वेंकटचलैया आयोग द्वारा सिफारिश की गई थी।[15]

उस समय में वापस जाते हैं जब भारत ने अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की और विभाजन की कीमत चुकाई निस्संदेह अनुच्छेद356 उस समय की आवश्यकता प्रतीत होता है न कि राज्य की स्वायत्तता का उल्लंघन। हालांकि, केंद्र की सरकारों के अलगअलग मंसूबों- के कारण इसका दुरुपयोग भी इसकी भावना के विपरीत होता रहा है लेकिन विपक्ष शासित राज्य भी इसके खिलाफ मुखर रहे हैं कई बार राज्य सरकारें भी लोकतांत्रिक शासन के सिद्धांतों की धज्जियां उड़ाती पाई गई हैं। राज्यों को भी अपने कर्तव्यों का पालनकरते हुए ऐसा मौका नहीं देना चाहिए कि सही कार्य न करने के कारण केंद्र को उसका आह्वान करने का अवसर मिल जाए। कोई कानून अच्छा या बुरा नहीं होता। यह कार्यान्वयन की भावना है जो किसी भी कानून की प्रभावशीलता और निरर्थकता को निर्धारित करती है। इसलिए केंद्र और राज्य दोनों को ऐसी शर्तों पर पहुंचने की कोशिश करनी चाहिए कि इस अनुच्छेद का इस्तेमाल किया जाए। भारतीय परिस्थितियाँ पत्र और भावना दोनों में एक सहकारी संघवाद की माँग करती हैं।

संदर्भ

[1] XI Constituent Assembly Debate 976.

[2] Sections 93 and 45 of the Government of India Act 1935

[3] Constituent Assembly Debates on drafts Articles. 277 and 277 A

[4] AIR 1994 SC 1918 at 2112 para 365 (9)

[5] According to article 74 (1), "There shall be a Council of Ministers with the Prime Minister at the head to aid and advise the President who shall, in the exercise of his functions, act in accordance with such advice."

[6] Ahmadi,J., in S.R. Bornmai vs. Union of India AIR 1994 SC 1918

[7] During Nehru era there were 6 cases, in Lal Bahadur Shastri era 2 cases, in Indira Gandhi era 28 cases, in Janata rule 12 cases. The latest number about the use of Article 356 is more than 86.

[8] Tamil Nadu (1979) and Manipur (1979) are two states placed under President's Rule in this category

[9] Sarkaria Commission Report.

[10] The Rajasthan (1967) & Orissa (1971) incident were similar as no party got clear majority. Congress emerged as largest single party, United Front in both cases claimed support for viable ministry and requested the Governors to give them opportunity to form the Government. Even the opposition parties assured the Governors to form the Government but Governors of both the states denied their rights and instead President's Rule was imposed.

[11] TK Tope, Constitutional Law of India, 2nd Ed (Lucknow: Eastern Book Co., 1992)

[12] The Statesman, 23 Feb 1991

[13] Sunderlal Patwa v. Union of India, AIR 1998 MP 214.

[14] Constitutional Review Committee Report 2002

[15] The Commission was constituted under chairmanship of Shri M.N. Venkatachalia, the former Chief Justice of India, by a resolution of the Government of India dated 22nd February 2000 (Vol. I at 1 para 1.1.1) to examine as to how the Constitution can respond to the changing needs of efficient, smooth and effective system of governance and recommend changes (at 2-3 para 1.3.1). The Report was submitted to the Government on the 31st March 2002 (at vii) entitled as "Report of the National Commission to Review the Working of the Constitution" (Vol. I)